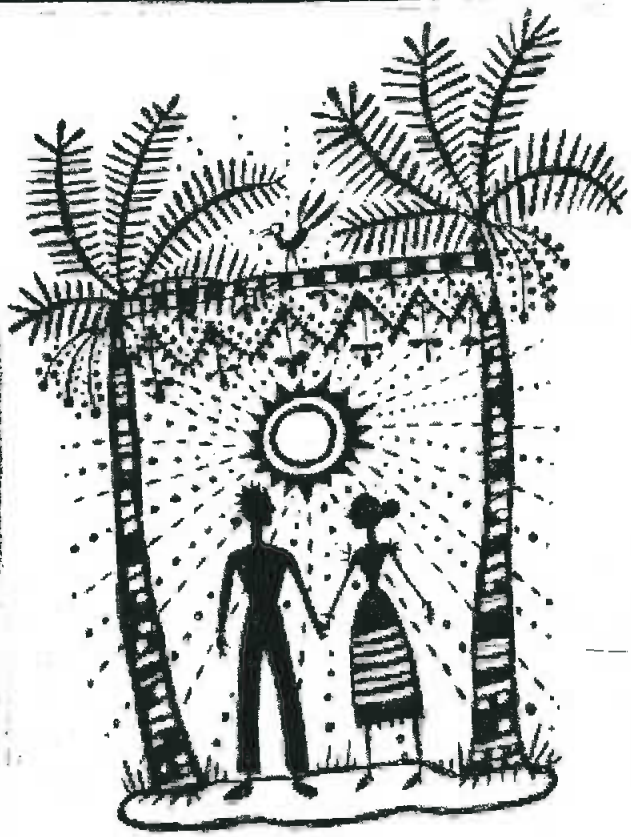

हस्ताक्षर-15

हम बड़े नहीं, फिर भी बड़े हैं
इसलिये कि लोग जहाँ गिर पड़े हैं
हम वहां तने खड़े हैं,
द्वन्द की लड़ाई भी साहस से लड़े हैं
न दुख से डरे न सुख से मरे हैं
काल की मार में जहां दूसरे झरे हैं
हम वहां अब भी हरे के हरे हैं

- - - - - केदारनाथ अग्रवाल

हस्ताक्षर
अंक - 15 (जुलाई से दिसंबर 2014)

संपादक मंडल

पूर्णिमा वत्स
मोनिका शर्मा
शशांक कुमार द्विवेदी
तनुजा
आशुतोष कुमार शुक्ल
सूरज कुमार

संपादक

रचना सिंह

हस्तलेखन सहयोग

मोनिका शर्मा, अभिषेक उपाध्याय, आदर्श कु॰ मिश्र, त्रिनेत्र तिवारी, अतुल शुक्ला, शशांक द्विवेदी, कमरुजमा अंसारी, तनुजा, लक्ष्मी, चंचल सचान, आशुतोष कु॰ शुक्ल, अंकित राज, अखिलेश त्रिपाठी, अवनीश, पल्लव, अरविंद कुमार 'संबल', रचना सिंह, असीम

संपादकीय - संपर्क

हिंदी विभाग, हिंदू महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली - 07
मोबाइल - 9891039305

• प्रकाशित रचनाओं के विचार से हस्ताक्षर का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

अनुक्रम

- चौखट - रचना सिंह 1
- साक्षात्कार : आक्रांत दुनिया में निर्दोष कविता की तलाश:
  - वीरेन डंगवाल से बातचीत 3
- विविधा :
  - बालकांड : एक छोटी-सी लव स्टोरी
    -प्रवीण कुमार 11
- कविताएँ :
  - चौखट - असीम अग्रवाल 18
  - कोई अपना गया - आदर्श कुमार मिश्र 22
  - स्त्री व अधिकार - श्वेता सिंह 23
- बदलते लोग - शशांक कुमार द्विवेदी 24
- हमारे गाँव और गाँधी - अमित कुमार यादव 27
- आस्था का जन-सैलाब : बर्फानी बाबा (यात्रा वृत्तांत)-
  हरीन्द्र कुमार 30
- पीड़ा, प्रतिरोध और मुक्तिराग - अरविंद कुमार 'संबल' 33
- भोजपुरी गीतों का गिरता स्तर - नीलम सिंह 38
- 'गपोड़ी से गपशप' पढ़ते हुए - विवेक कुमार पांडे 42
- अपनी ज़मीन : लोक कथाओं के पुनर्सर्जक:
  विजयदान देथा - घनश्याम दास स्वामी 45
- देशांतर : नादिन गार्डिमर~ अफ्रीकी अजियारा - रोहित कुमार 53
- नादिन गार्डिमर की याद - गोपाल कृष्ण गाँधी 57
  (अनुवाद : मिहिर पंड्या)

- इन दिनों
  - किताबी-यात्रा : नंद चतुर्वेदी - अभिषेक कुमार उपाध्याय 63
  - गौरू का लैपटॉप और गोर्की की भैंस : चरण सिंह 'पथिक' - तनुजा 67
  - एकांत में आँगन : पेंटिंग अकेली है : चित्रा मुद्गल - सूरज कुमार 69
  - सारांश : प्रभात - पूर्णिमा वत्स 70
- पुनः पाठ :
  - विचारधारात्मक फांस की कविता : 'अंधेरे में' - डॉ॰ रामेश्वर राय 73
  - टेपचू : वह जन मारे नहीं मरेगा - पल्लव 82
- पांडुलिपि :
  - नए साल में क्या लिखूँगी - मृदुला गर्ग 86
  - पाँच कविताएँ - चंद्रकांत देवताले 90

- चौखट -

हमारे समय के शोर में शमशेर की कविता बेतरह याद आती है - 'बात बोलेगी हम नहीं।' आज के दौर में ठीक इसके उलट केवल हम ही बोलते हैं, ज़ोर-ज़ोर से बोलते हैं और बात बेचारी कहीं दुबकी-सी रह जाती है। असल में यह संवादहीनता का दौर है, जहाँ बात की नहीं जाती बल्कि चर्चा की जाती है। ऐसा लगता है कि 'बतियाना' और 'बतकही' जैसे शब्द कुछ ही समय में जीवाश्म बन कर रह जाएँगे। चूँकि अब हम बात करते नहीं बल्कि बात कहते हैं, इसलिए प्रत्युत्तर में हमारा ही कोई हमज़ुबां हमारी ही भाषा बोलता है। ऐसे में बात धरी-सी रह जाती है और भाषा का एक नया रूप बनता है जो संवाद से नहीं बल्कि संवादहीनता से आकार लेता है। 'बतियाना' वस्तुतः गहरी आत्मीयता की निष्पत्ति है, जो आज लुप्तप्राय है। सोशल मीडिया में यह परिघटना और मुखर है, वहाँ आत्मीयता का स्थान संकीर्ण आत्मतुष्टि ने ले लिया है —। इसी आत्मतुष्टि के दायरे में सोशल मीडिया की भाषा बनती है, जहाँ बातचीत या तो दरबारीपन का आधुनिक संस्करण नज़र आती है या फिर एक अखाड़े की उठापटक। ज़ाहिर है कि संवाद दोनों में से किसी भी स्थिति में संभव नहीं है।

आज के दौर में असहिष्णुता का जो विषण्ण संकट दिखाई पड़ रहा है, वह संवादहीनता की ही निर्मिति है। असल में 'संवाद' और 'बतकही' सहिष्णुता की ज़मीन तैयार करते हैं। दूसरों की बात सुन पाने का धैर्य एक मुकम्मल समझ निर्मित करता है। बहादुर शाह ज़फ़र ने किसी दूसरे संदर्भ में लिखा था, लेकिन उनकी यह पंक्ति आज मुझे बार-बार याद आती है - 'बात करनी मुझे मुश्किल कभी ऐसी तो न थी।'

घर परिवार में बुज़ुर्गों का निचाट अकेलापन इसी संवादहीनता की